कार्यालय के विचार

विचार– ज्ञानतत्व 298 में मैनें बारह प्रश्न पूछे थे। उसके शिवदत्त जी बांदा के उत्तर तथा मेरे उत्तर साथ–साथ प्रकाशित है। अब तक किसी और ने प्रश्नो का उत्तर नही दिया है। यदि उत्तर आयेगा तो ज्ञान तत्व मे प्रकाशित किया जायेगा।

प्रश्न–1–संविधान,मूल अधिकार तथा अपराध की परिभाषा क्या है?

उत्तर–शिवजी– संविधान एक ऐसा दस्तावेज है जिसके आधार पर सत्ता का संचालन सुनिश्चित किया जाता है।

मेरा–राज्य के अधिकतम तथा समाज के न्यूनतम अधिकारों की सीमायें निश्चित करने वाले दस्तावेज को संविधान कहते है। राज्य के न्यूनतम तथा व्यक्ति के अधिकतम अधिकारों की सीमाएँ निश्चित करने वाला दस्तावेज कानून होता है।

मूल अधिकार –शिवजी –धरती पर अवतरित होने वाले व्यक्ति के गरिमामय जीवन में खड़ी बाधाओं से निपटने वाले उपाय व्यक्ति के मूल अधिकार है।

मेरा– व्यक्ति के वे प्रकृति प्रदत्त अधिकार जिनमें संविधान, राज्य, समाज सहित कोई भी अन्य उसकी सहमति के बिना तब तक कोई कटौती नही कर सकता जब तक उसने किसी अन्य के वैसे ही अधिकारों में कोई कटौती न की हो।

अपराध– शिवजी–नीति विरुद्ध, समाज विरुद्ध किये गये कार्य अपराध हैं। बालिग होने पर आपसी सहमति से बिना विवाह संबंध बनाना कानूनी दृष्टि से अपराध नही है किन्तु सामाजिक दृष्टि से अपराध है।

मेरा– किसी व्यक्ति के मूल अधिकारों का उलंघन अपराध, संवैधानिक अधिकारों का उलंघन गैर कानूनी तथा सामाजिक अधिकारों का उलंघन अनैतिक होता है। हर अपराध गैर कानूनी तथा अनैतिक भी होता है। किन्तु आवश्यक नहीं कि हर गैर कानूनी या अनैतिक कार्य अपराध हो।

प्रश्न–2–पारिवारिक संबंधों से भिन्न स्त्री पुरुषों के बीच दूरी घटनी चाहिए या बढ़नी चाहिये या दूरी घटाने या बढ़ाने का निर्णय स्वंय को या परिवार को करने की स्वतंत्रता होनी चाहिये।

उत्तर–शिवजी– सामाजिक पृष्टभूमि के लिहाज से ऐसे किसी प्रश्न का कोई औचित्य नही बनता क्योंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है।

मेरा–निर्णय का अधिकार व्यक्ति या परिवार की स्वतंत्रता होनी चाहिये। समाज मार्ग दर्शन कर सकता है, थोप नही सकता ।

प्रश्न–3–स्वतंत्रता के बाद भारत में आवश्यक उपभोक्ता वस्तुएँ कितनी गुनी महंगी हुई हैं और उस महँगाई का आधी निचली आबादी पर क्या और कितने गुना प्रभाव पड़ा?

उत्तर– शिवजी– आजादी के बाद उपभोक्ता वस्तुओं की मूल्य वृद्धि में कोई तारतम्य नहीं है। क्योंकि मूल्य निर्धारण के आधार का अभाव है। शोषक वर्ग इस महँगाई से मालामाल हुआ वही शोषित समुदाय बेहाल ।

मेरा– सन् सैंतालिस के बाद सोना, चादी, जमीन बहुत महँगी हुई है। कृत्रिम ऊर्जा, दाल, खाद्य तेल लगभग समान, इलेक्ट्रिक वस्तुएँ, फोन, पेन, आदि बहुत सस्ते तथा रोटी कपड़ा मकान आवागमन आदि सभी शेष वस्तुएँ कुछ सस्ती हुई हैं। भारत की आधी निचली आबादी का जन जीवन स्वतंत्रता के बाद औसत दो गुना, बुद्धि जीवियों का औसत आठ गुना तथा सम्पन्नों का औंसत चौंसठ गुना उंचा हुआ है। सन् सैंतालिस के बाद मूल रुपये की तुलना में वर्तमान भारतीय रुपये का लगभग बयासी गुना अवमुल्य हुआ है जो अगली वर्ष तक अठासी हो सकता है।

(4) संसद संविधान से उपर होती है या नीचे

शिवजी– नीचे। अंश से अंशी नीचे होता है।

मेरा– नैतिक रुप से संसद संविधान से नीचे होती है किन्तु वर्तमान रुप में उपर क्योंकि संसद को संविधान संशोधन के असीम अधिकार प्राप्त है।

(5)परिवार का संचालक प्राकृतिक रुप से नियुक्त होना चाहिये या लोकतांत्रिक तरीके से

शिवजी– प्राकृतिक रुप से ।

मेरा–लोकतांत्रिक तरीके से। परिवार में मुखिया और प्रमुख दो पद होना चाहिये। मुखिया की भूमिका संचालक या प्रधानमंत्री के समकक्ष हो जिसका चुनाव सब मिलकर करे। प्रमुख की भूमिका राष्ट्रपति के समकक्ष हो जो सबसे अधिक उम्र का हो चाहें महिला हो या पुरुष । परिवार की सम्पूर्ण सम्पत्ति सामूहिक हो जिसमें अलग होते समय सदस्य संख्या के आधार पर बंटवारा हो। परिवार के मुखिया का परिवार पर अनुशासन हो । परिवार प्रमुख सबसे अधिक सम्मान और सुविधा का पात्र हो ।

(6)परिवार व्यवस्था में लोकतंत्र आना चाहिये या नहीं।

शिवजी –प्रेम का अभाव व्यवस्था का जनक है।

मेरा– परिवार व्यवस्था में लोकतंत्र आना ही चाहिये।

(7)राज्य के दायित्व तथा स्वैच्छिक कर्तव्य कौन–कौन से है?

शिवजी– जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी ,सो नृप अवश्य नरक अधिकारी ।

मेरा– सुरक्षा और न्याय राज्य का दायित्व होता है। तथा अन्य सभी कार्य स्वैच्छिक कर्तव्य।

(8)धर्म समाज तथा राष्ट्र में से कौन उपर होता है कौन नीचे

शिवजी – जन्म दाता सर्वोपरि है।

मेरा– समाज सर्वोच्च होता है।धर्म और राज्य नीचे।

(9)मैंने पॉच प्रकार के अपराध (1)चोरी डकैती लूट (2)बलात्कार (3)मिलावट, कमतौल (4)जालसाजी धोखा (5) हिंसा बलप्रयोग आतंक तथा छः प्रकार की कृत्रिम समस्याएँ (1)भ्रष्टाचार (2)चरित्र पतन (3)साम्प्रदायिकता (4)जातीय कटुता (5)आर्थिक असमानता (6)श्रमशोषण। कुल मिलाकर ग्यारह समस्याएँ लिखी। इन ग्यारह में सें आप किसे सबसे ज्यादा खतरनाक मानते हैं तथा किसे सबसे कम।

शिवजी–चरित्र, नैतिकता, संस्कारों का अभाव अर्थात त्रयी शून्यता सबसे बड़ी समस्या।

मेरा– देश काल परिस्थिति अनुसार प्राथमिकताएँ बदलती रहती है। ग्यारह के अतिरिक्त कोई अन्य समस्या ऐसी नहीं जिसे ग्यारह के साथ जोड़ सकें।

(10)समान नागरिक संहिता और समान आचार संहिता में क्या फर्क हैं।

शिवजी– एक संबंधों को परिभाषित करती है तो दूसरी आचरण को।

मेरा–आचार संहिता व्यक्ति का व्यक्तिगत मामला है। आचार संहिता में राज्य कोई दखल नही दे सकता। नागरिक संहिता संवैधानिक मामला है। राज्य हस्तक्षेप कर सकता है।

(11)व्यक्ति और नागरिक में फर्क है या नहीं। है तो क्या

शिवजी– पहला ईश्वर का उपहार है तो दूसरा राष्ट्र का

मेरा–अन्तर है। व्यक्ति समाज का अंग है और नागरिक राष्ट्र का। प्रत्येक नागरिक व्यक्ति भी होता है किन्तु आवश्यक नहीं कि प्रत्येक व्यक्ति उस देश का नागरिक भी हो।

(12)यदि भारत की आधी आबादी को दो हजार मूल रुपया प्रतिमाह प्रतिव्यक्ति ऊर्जा भत्ता देकर सम्पूर्ण कृत्रिम ऊर्जा की भारी मूल्य वृद्धि करके भरपाई कर ली जाये तो भारत की कुल आबादी के कितने प्रतिशत लोग भत्ता लेना चाहेंगे और कितने सस्ती ऊर्जा?

शिवजी– लूट कर दान देने की बात सही नहीं हो सकती। मुफ्त खोरी को बढ़ावा देना समाज की आत्म निर्भरता में बाधक है। मुफ्त में मिले खाने को तो कौन जाये कमाने को ।

मेरा– सम्पूर्ण आबादी के दो तिहाई लोग ऊर्जा भत्ता लेना पसंद करेंगे तथा एक तिहाई सस्ती ऊर्जा।

1 शिव दत्त जी का अन्य कथन

प्रश्न–कुछ लोग धार्मिक भावनाएँ भड़काकर उनका दोहन करने से अपने राजनीतिक स्वार्थ सिद्ध करते है और आप हिन्दुस्तान की गरीबी और गरीबों की भावना को सतह पर लाकर अपने आन्दोलन के साथ भीड़ जुटाना चाहते है। दो हजार महीना मिलने की पुकार पर गरीब, दरिद्र अभावग्रस्त खिंचे चले आयेंगे जबकि इस सच्चाई को आप बखूबी समझते हैं कि ऐसा कभी होने वाला नही है। तब जिस आन्दोलन की नीयत में ही खोट हो तब उसके परिणाम अच्छे कैसे हो सकते हैं। फिर आप के चार मुद्दे किसी परिवर्तन के भी संकेतक नहीं है। जातिवाद हर तरह के परिवर्तन, विकास और लोकतंत्र की राह का रोड़ा है। आप की पांत में खड़े सभी लोग यथास्थिति में परिवर्तन तलाश रहे हैं जो बालू से तेल निकालने जैसा है।

मूल पदार्थ से दवा बनाने के बाद दवा निर्माता कम्पनी दवा के लेबल पर विधि व शास्त्र का नाम अंकित कर देती है। बस आदमी के जीवन में धर्म का यही महत्व है कि वह किस विधि से आदमी से इन्सान बनाया गया।

इन प्रश्नो के अलावा नामकरण को लेकर एक बात आपसे कहनी हैं। नाम के अनुसार आचरण या आचरण के अनुसार नाम इनमें गहरा संबंध है। कालनेम पवनसुत को भरमाने के लिये मुनि का वेश बनाया जरुर पर तदनुरुप आचरण के अभाव में आकाशवाणी हुयी कि मुनि न होय यह निशिचर छोरा। तात्पर्य यह कि नाम आचरण एक दूसरे पर आश्रित हैं अधिकांशतः। कोई परिवार अपने बेटे का नाम रावण या कुम्भकर्ण नही रखता । तब यह कहना कि नाम का प्रश्न गौण है सही नही क्योंकि हिन्दुओं में नामकरण एक संस्कार माना जाता हैं जिसे धर्म परिर्वतन या स्थिति परिर्वतन पर ही बदलने की अनुमति है। यहॉ भारत का नाम बिना अनुमति के बदला गया है। इस नाम के साथ एक इतिहास और नाम की सार्थकता नत्थी हैं जिसे झुठलाना सही नही हैं

उत्तर–मैंने बारह प्रश्नो पर आपके और अपने उत्तर एक साथ प्रकाशित कर दिये हैं। पाठक ही तय करेंगे कि किन प्रश्नों पर किन का उत्तर ठीक हैं। इतना तो पाठक अवश्य समझेंगे कि अपने.....पर ताल लगाने तथा ढोलक पर ताल लगाने में बहुत फर्क होता है।

शिवदत्त जी ने बारह उत्तरों के साथ पत्र में जो लिखा है वह साथ में रहने से मैंने छाप दिया किन्तु उत्तर देना उचित नहीं क्योंकि पत्र की शेष बातें या तो व्यक्तिगत आक्षेप हैं अन्यथा संस्थागत। मैं पहले ही लिख चुका हुँ कि आपके व्यक्तिगत प्रश्नोत्तर न छापे जायेंगे न उत्तर दिया जायेगा। संस्थागत प्रश्नोत्तर भी आवश्यक होगा तो उत्तरार्ध में ही जा सकता है। मेरा आपसे निवेदन है कि आप व्यक्तिगत या संस्थागत टिप्पणी करने की अपनी आदत बदलें। विचारक यदि विचार प्रस्तुति तक सीमित है तथा आंदोलन से प्रत्यक्ष जुड़ा नही हैं तो विचारक की नीयत की समीक्षा समीक्षक की नीयत पर संदेह पैदा करता है। मैं तो मात्र विचारक हूँ तथा आंदोलन की टीम बिल्कुल अलग है। यदि आपके कथनानुसार उन सबकी नीयत पर आपका आक्षेप है तो उनकी नीयत पर मैं कोई उत्तर नही देना चाहता।

2 चिन्मय व्यास, मालदेवता, देहरादून उत्तराखंड 1626

प्रश्न–कल दिनॉक 29/9/14 शाम को वह लिफाफा मिला जिसमें आपने मेरे पत्र के उत्तर में मुक्तानंद जी और स्वतंत्रता की गोपनीय संधि की बात बताई है। मैं अब तक इन बातों से अनभिज्ञ था । यदि वास्तव में ऐसी संधि हुई है तो देश की जनता के साथ यह बहुत बड़ा धोखा किया गया है। संधि की अवधि 50 वर्ष थी जो पूर्ण हो चुकी है। अब सूचना के अधिकार के अतर्गत सरकार से उसकी पूरी जानकारी प्राप्त की जानी चाहिए । नरेन्द्र मोदी को इस सम्बंध में कुछ मालूम है या नही। जो भी हो हमारे प्रतिनिधि मंड़ल को इस बारे में प्रधानमंत्री से मिलना चाहिए और उनसे कहना चाहिए कि वास्तविकता जनता को बतावें।

संविधान हर वयस्क व्यक्ति को पहली इकाई मानता है, आप परिवार को पहली इकाई मानते है। पिछले साठ सालों में लोकमानस और सामाजिक व्यवस्था में बहुत बदलाव आया है। यहॉ और मालावार क्षेत्र के गावों में मैंने देखा है कि सयुक्त परिवार बहुत कम हैं। स्वार्थ वृति और निजी स्वतंत्रता की भावना तथा भौतिकवाद और आर्थिक स्वतंत्रता की भावना संयुक्त परिवार को तोड़ने का काम कर रही

है। वैसे परिवार को तो जैसा भी वह रहें, स्वतंत्रता है ही। परिवार को लोकतंत्र की छोटी इकाई मामना या ग्राम पंचायत को छोटी इकाई मानना? परिवारवाद को महत्व देना या पंचायत को अधिकाधिक स्वतंत्रता देना, वोट का अधिकार व्यक्ति को देना या परिवार को देना? इनमे क्या उचित है? आम जनभावना क्या है? पिछले इतने चुनावों में व्यक्तिगत स्वातंत्रय की भावना इतनी दृढ़ हो चुकी है कि अब परिवार वाली बात चल नही पायेगी।

लोकसंसद के लिये दस–बीस लोगो का चुनाव करने के नियम वर्तमान संसद बना सकती है। यथा, जो सांसद चार या पॉच बार लोकसभा के सदस्य चुने गये है, वे लोक संसद के सदस्य हो,राष्ट्रपति,सर्वोच्च न्यायालय,चुनाव कमीशन,एक–एक सदस्य नामजद करें। तीन सदस्य राज्यसभा चुने (यथासंभव सर्वसम्मति से)।लोकसभा और राज्यसभा के अध्यक्ष या उनके प्रतिनिधि। ऐसी लोकसंसद बनाई जा सकती है या अन्य प्रकार से भी बनाई जा सकती है। लोकसंसद जो निर्णय सर्वसम्मति से या 75प्रतिशत के बहुमत से करे वह वर्तमान संसद को मानना अनिवार्य हो। संसद जो गलती करे उसे सुधारने या निरस्त करने का लोकसंसद को अधिकार हो।हमें सरकार के सामने ऐसी मॉगें रखनी चाहिए जो आमतौर पर जनमान्य हो,जनभावना के अनुकूल हो और आसानी से जनता समझ सके। हमारी मॉगें केवल आपकी या आपके संगठन की कल्पनाओं पर आधारित न हो। जब तक वे मॉगे लोगों की समझ से परे होगी, या सरकार की समझ से परे होगी तो उन्हें केवल अपनी पत्रिका में या जंतर–मंतर पर प्रर्दशन करने से क्या होगा?

हमारी मागों के बारे में सुदूर पूर्व वाले,तमिलनाडु, केरल वाले,कश्मीर,लद्दाख वाले,असम वाले, उड़ीसा वाले ,हिन्दी भाषी ,और जागरुक मुसलमान ,किश्चन क्या सोचते है?क्या हमने कभी उन क्षेत्रों में जानकारी दी है कि हम देश की जनता के हित में ये मॉगें रख रहें है।

उत्तर–मुक्तानंद जी ,जिस संधि का होना बता रहें हैं वह बात सत्य नही लगती। मान लीजियें कि यदि सच भी हो तो बिना किसी प्रत्यक्ष प्रमाण के ऐसी बेसिर पैर की बात नहीं उठाई जा सकती। मुक्तानंद जी स्वंय जीवित भी नहीं हैं जो प्रमाण हो सके। कल्पना करिये कि यदि इस बात को एक बार भी असत्य कह दिया गया जो स्वाभाविक ही हैं तो प्रश्न कर्ता की भी विश्वसनीयता घट जायेगी।

संविधान हर वयस्क को व्यवस्था की पहली इकाई नहीं मानता बल्कि ग्राम सभा को व्यवस्था की पहली इकाई मानता है और वयस्क को मतदाता अर्थात् ग्राम सभा का सदस्य । हम परिवार को व्यवस्था की पहली इकाई मानते हैं और ग्राम सभा को दूसरी। ग्राम पंचायत व्यवस्था की कोई इकाई नही होती। ग्राम पंचायत तो ग्राम सभा की कार्यपालिका मात्र है। जिस तरह आप ग्राम संसद के पक्षधर है। उसी तरह मैं परिवार संसद का पक्षधर हूँ। परिवार एक सचल इकाई है और गॉव अचल । असहमति होने पर नया परिवार बनाना संभव है। किन्तु असहमति होने पर गॉव छोड़ना कठिन काम है। परिवार में सर्वसम्मति होना अधिक संभव हैं, गॉव में कठिन हैं। संयुक्त परिवार लगभग टूट गये हैं। यह परिवार व्यवस्था में लोकतंत्र के अभाव तथा राजनेंताओं द्वारा खराब नीयत से परिवार व्यवस्था को समाप्त करने के प्रयास का परिणाम है। हम एक ओर तो परिवार व्यवस्था में लोकतंत्र लाना चाहते हैं दूसरी ओर परिवार को संसद का स्वरुप देकर सरकारी हस्तक्षेप से मुक्त करना चाहते है। परिवारों का टूटना मजबूरी है,आदर्श नहीं। यदि मेरे सुझाव काम में आये तो संयुक्त परिवार व्यवस्था धीरे–धीरे मजबूत होने लग जायेगी। व्यक्ति स्वातंत्र पश्चिम की अवधारणा है,भारत की नहीं।परिवार सहजीवन की पहली पाठशाला है। पहली पाठशाला का टूटना उत्श्रृखलता के विस्तार में सहायक है।

सरकार ने वोट का अधिकार वयस्क को दिया है और मैंने प्रत्येक व्यक्ति को। परिवार के लोग मिलकर जिसे अधिकृत कर दें वह व्यक्ति वोट देगा और उसके वोट उसकी सदस्य संख्या के आधार पर गिने जायेंगे। आज हम सांसद चुनते है। और सांसद प्रधानमंत्री। यदि सांसद प्रधान मंत्री चुन सकता है तो परिवार का मुखिया सांसद चुने इसमे गलत क्या है। आज सरकार के पास बहुत ज्यादा अधिकार होने से वोट का बहुत महत्व दिखता है।यदि ये अधिकार परिवार, गॉव, जिले तक बंट गये तो वोट का महत्व कम हो जायेगा। फिर भी यदि इन बातों पर कोई भिन्न सहमति बनती है तो मुझे आपत्ति नहीं।

आपने लोक सांसद के लिये नया सुझाव दिया हैं। मेरा सुझाव मात्र इतना सा है कि जिस इकाई के पास कानून बनाने और पालन करवाने का अधिकार है उसे ही संविधान संशोधन के असीम अधिकार न होकर कोई भिन्न इकाई को होना चाहिऐ। चार नवंम्बर निन्यान्नवे को घोषित प्रस्तावित संविधान में लोक संसद के लिये सुझाव था कि ग्यारह पूर्व राष्ट्रपति, पूर्व प्रधानमंत्री, पूर्व सर्वोच्च न्यायाधीश एक सौ सरकारी कालेजो के प्राचार्य को मिलाकर लोक संसद बनेगी।प्राचार्यो का चुनाव बीए या उसके ऊपर के प्रोफेसर करेंगे तथा ग्यारह का चुनाव ये सौं प्राचार्य करेंगे।दूसरा सुझाव मैंने अब दिया है जिसमें हर मतदाता चुनाव के समय ही दो वोट देकर लोक संसद बनायेगा। तीसरा सुझाव आपका है।यदि कोई चौथा भी सुझाव हो तो विचार संभव हैं। संविधान संशोधन पर हस्ताक्षर राष्ट्रपति करते है,समीक्षा सर्वोच्च न्यायालय करता है। यह कैसे उचित है कि वे ही चुनाव करें। जो कई बार से सांसद है वह अपनी संसद सदस्यता छोड़कर लोक सांसद जैसा कम महत्व का पद क्यों स्वीकार करेगा। इन बातों पर भी विचार करना होगा। लोक संसद यदि सर्वसम्मत भी हो तो उसका निर्णय अन्तिम नहीं होंसकता । यदि वर्तमान संसद सहमत न हो तो जनमत संग्रह ही आदर्श स्थिति होगी।सरकार तो हमारी छोटी सी मॉग नही मानेगी। जयप्रकाश जी या अन्ना हजारे जी ऐसे ही सुधार करते –करते भटक गये। क्या गॉधी जी इसी तरह संशोधन करते थे?नहीं। हमारे साथियों ने जो चार मॉगे रखी हैं उसमें भी एक संशोधन है कि चार में से कोई भी एक मॉग सरकार मान लेती है तो दो हजार उन्नीस के चुनाव समाप्त होते तक हमारा आन्दोलन स्थगित रहेगा। सरकार कोई महत्व ही न दे और हम अपनी मॉग घटाते जाय । हमारी तीन मॉगें तो सरकार से न होकर संसदीय लोकतंत्र से हैं। हम संसदीय लोकतंत्र को सहभागी लोकतंत्र में बदलना चाहते है। आप सुझाव दे कि हम क्या करें।

3 गुप्त पत्र

प्रश्न––आपने ज्ञानतत्व 299के पृष्ठ 13–14 में लिखा है कि मुसलमान राजाओं ने बलपुर्वक हिंन्दुओं को मुसलमान नही बनाया । प्रारंभिक मुसलमान लूटपाट तक सीमित थे तो बाद के शासन करने तक। कई सौं वर्ष तक मुसलमानों ने भारत पर एक छत्र शासन किया है। यदि ऐसा वास्तव में हुआ होता तो भारत में हिंन्दु धर्म बचता ही नहीं। धर्म के मामले में अत्याचार औरंगजेब ने ज्यादा किये और यह अत्याचार भारत से इस्लाम के पतन की शुरुआत बना । भारत में अनेक असत्य बातें मुसलमानों के साथ जोड़ दी जाती है। भारत की पूर्व महिला

राष्ट्रपति ने तो अज्ञान वश यहॉ तक कह दिया कि भारत की महिलाओं में पर्दा प्रथा मुस्लिम संस्कृति की नकल है। कुछ लोग यह भी कह देते है कि भारत में बाल विवाह का प्रचलन मुस्लिम राजाओं से सुरक्षा के उद्देश्य से प्रचलित हुआ है। मेरे विचार से दोनों प्रथाएँ मुसलमानों के पूर्व भी थी और कोई सामाजिक विकृति नहीं मानी जाती थी। मुझे लगता है कि आपने सही इतिहास नहीं पढ़ा है। ये सच है कि मुस्लिम हमलावरों ने भारत की अकुत सम्पदा को प्राप्त करने के लिये ही हमले किये पर ये भी सच है कि वे अपने इस उद्देश्य के साथ ही धर्मान्तरण भी करवाते थे। वे हिन्दू पुरुषों और बच्चों को मौत के घाट उतार देते थै। हिंन्दू औरतो के साथ बलात्कार और बड़ी संख्या में गुलाम बनाकर बेचा जाता था। ये हमारी बदकिस्मति है कि भारत में कोई राजा ऐसा पैंदा नहीं हुआ जो अन्य राजाओ को एक कर लड़ाई करते । मैं आपको आगे पत्र लिखकर मुस्लिम राजाओं की सच्चाई से अवगत जरुर कराऊँगा। अगर आप मेरी बातों को गलत सिद्ध कर सके तो मैं अपने साथियों के साथ मुस्लिम धर्म से टकराना छोड़ दूँगा।

छोटी कक्षाओं में एक कहानी पढ़ायी जाती है कि बादशाह हुमायुँ ने चितौड़ की रानी कर्मवती के द्वारा राखी भेजकर रक्षा का निवेदन किया। परन्तु समय पर नही पहुँच पाने के कारण रानी को सती होना पड़ता है। यहॉ पर हमारी सरकार एक सच्चाई छुपा लेती है। शायद यह सच्चाई आपको भी मालूम नही है। हकीकत यह है कि जब हुमायु के पास राखी पहुचती है तो हुमायुँ तुरन्त अपनी सेना के साथ चितौड़ के लिये रवाना हो जाता है। मगर मार्ग मे वह एक पडाव में आराम के लिये रुकता है। शेरशाह सुरी का अंदाजा सही निकलता है कि बादशाह हुमायुँ काफिर से लडने वाले अपने सहधर्मी भाई पर आक्रमण नही करेगा। शेरशाह पड़ाव की सूचना पाते ही दुगने जोश और ताकत के साथ दुर्ग का घेराव कर दुर्ग का पतन कर देता है।

बदशाह हुमायुँ दुर्ग के पतन की खबर मिलने पर अपनी यात्रा की फिर से शुरुवात करता है और चित्तौंड़ की गद्दी पर कर्मवती के पुत्र को बैठाता है। रही बात बाल विवाह की तो लड़की की रजोनिवृत्ति की आयु (शायद 12 वर्ष के बाद)विवाह कर दिया करते थे। परन्तु पर्दा प्रथा का प्रचलन मुसलमानो के आगमन के बाद हुआ। इसलिये आपको कोई जानकारी नही हो तो गलत जानकारी न दे। इस्लाम मुक्त भारत मेरी जिन्दगी का उद्देश्य है और इसके बीच में जो आयेगा वो मेरा दुश्मन है। और सबसे पहले उनसे निपटा जायेगा।

उत्तर–आपने पत्र के अन्दर या उपर कहीं भी अपना नाम पता ज्ञानतत्व पाठक नम्बर नही लिखा। लाल स्याही से लिखा पत्र है। ऐसी ही लाल स्याही का बिना नाम का पत्र करीब ड़ेढ वर्ष पुर्व भी आया था। आप जैसे कायर इस्लाम से नही टकरा सकते यह मुझे पूरा विश्वास है। जो व्यक्ति स्वतंत्र और लोकतांत्रिक भारत में आतंकवादियों के समान अपनी पहचान छिपाकर जहर उगलता है वह कायर हिन्दुत्व के लिये अधिक नुकसान देह है। आपने कैसे यह पता कर लिया कि शेरशाह सूरी समझता था कि हुमायुँ सहायता का नाटक कर रहा है। मुझे तो लगता है कि पिछले जन्म में आप या तो शेरशाह सूरी रहें होंगे या हुमायु तभी तो आपने इतनी बात जान ली।जिसके तर्को में शक्ति नही होती वही ऐसी धमकी की बात करता है। मैं वैसा हिन्दु नही जो तर्क की जगह धमकी की बात करें ।

विस्तार से उत्तर दुँगा यदि आप हिन्दुओं के समान पत्र लिखोगे। आपने अपनी शत्रु की जो पहचान बताई है तो मान ले कि मैं ही आपका शत्रु हूँ और आप मुझसे निपट लें।

कार्यालयीन प्रश्नो के उत्तर

1 प्रश्न– जनवरी ग्यारह मे देश के कुछ प्रमुख कानून विदो ने मनमोहन सरकार को नरेगा के श्रम मूल्य के संबंध मे एक पत्र लिखा था जिसका आपने ज्ञानतत्व दो सौ छवीस मे विस्तार से उत्तर दिया था। आज पुनः कुछ अर्थ शास्त्रियों ने पत्र लिखा है। कानून विदो के पत्र और उनकी समीक्षा भी प्रकाशित करे।

उत्तर–एक पत्रिका सच्ची मुच्ची के जनवरी ग्यारह के अंक में देश के पंद्रह प्रमुख विद्वानों ने एक खुला पत्र प्रकाशित करके सरकार से यह मांग की है कि वह नरेगा के अर्न्तगत दी जाने वाली मजदूरी को न्यूनतम श्रम मूल्य के समकक्ष करे। आपके विचार में यह मांग कितनी उचित है? आप भी श्रम मूल्य वृद्धि के लिये हमेशा प्रयत्नशील रहते हैं। आपने नरेगा के श्रम मूल्य वृद्धि की भी कई बार मांग की है। आप इन विद्वानों की मांग से कहॉ तक सहमत हैं? विद्वानो का पत्र इस प्रकार है। भारत सरकार एवं राज्य सरकारों को न्यूनतम मजदूरी कानून का सम्मान करना चाहिए और नरेगा श्रमिकों को कम मजदूरी देकर जबरन काम करवाना रोकना चाहिए। भारत ने एक उल्लेखनीय कानून, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी कानून–2005 पास करके ग्रामीण भारत के परिवारों को एक न्यूनतम स्तर की आय प्रदान की है और साथ ही विभिन्न प्रकार के कानूनी हकों को देकर सशक्त किया है। मजदूरी पर 100 दिन काम का अधिकार मिला है। यह कल्पना से भी बाहर है कि सरकार अपने ही काम में न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी दे। एक असंवैधानिक व जानबूझ कर लिये गये निर्दयतापूर्ण निर्णय के तहत भारत सरकार ने नरेगा श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी से अलग करके न्यूनतम मजदूरी कानून की महत्ता को नष्ट किया है और जिस चीज को सर्वोच्च न्यायालय ने बेगार या जबरन मजदूरी कहा उसे कानूनी जामा पहनाने का प्रयास किया है। जनवरी 2009 में एक नोटिफिकेशन से भारत ने इस कानून के तहत मजदूरी को 100 रूपये पर रोक दिया। धीरे–धीरे कई राज्यों में मनरेगा में मजदूरी कानूनी रूप से मान्य मजदूरी से भी कम होती गई। पिछले साल में खाद्यान की बेतहाशा मूल्य वृद्धि से यह मजदूरी और ज्यादा कम हो गई। बहुत सारी राज्य सरकारों ने, केन्द्र की दर से ज्यादा मजदूरी देने से इन्कार कर दिया और अब कई राज्य नरेगा श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी से कम मजदूरी का भुगतान कर रहे है। न्यूनतम मजदूरी कानून 1948 राज्य सरकारों व केन्द्र सरकारों को यह अधिकार देता है कि वे अधिसूचित रोजगारों में न्यूनतम मजदूरी तय करे। कानून यह कहता है कि 5 साल के अन्दर–अन्दर न्यूनतम मजदूरी में बदलाव होना चाहिए। 15वें राष्ट्रीय श्रमिक सम्मेलन ; 1957 में न्यूनतम मजदूरी तय करने के लिए जरूरत आधारित फार्मूला ईजाद किया गया जो न्यूनतम भोजन आवश्यकता, कपड़े की आवश्यकता जीवन यापन की न्यूनतम जरूरते व ईंधन के खर्चे को ध्यान में रखकर दिया गया। इन सिफारिशों को सर्वोच्च न्यायालय ने यूनियन बनाम केरल सरकार 1961 के मामले में बाध्यकारी बनाया और कामगार बनाम मेनेजमेन्ट ऑफ रेप्टोकोस बेट 2005 कम्पनी लिमिटेड 1992 के मामले में इन जरूरतों को विस्तार करके सर्वोच्च न्यायालय ने न्यूनतम मजदूरी के आधार को व्यापक व बाध्यकारी बनाया। इससे भी आगे बढ़कर सर्वोच्च न्यायालय ने इन सब आदेशों में यह साफ कहा कि

न्यूनतम मजदूरी न देना बेगार व जबरन श्रम की श्रेणी में आता हैं। जो संविधान की धारा 23 में प्रतिबन्धित है। इससे भी आगे सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि जबरन श्रम कई तरीकों से माना जा सकता है जिसमें गरीबी व जरूरतों का पूरा न होना शामिल है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि 1 जनवरी, 2009 के सरकारी नोटिफिकेशन को आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने निरस्त कर दिया है परन्तु भारत सरकार इसे पूरे देश में न मानने पर अड़ी हुई है। आज जब उत्पादकता दर 8 से 10 प्रतिशत है और गरीब व अमीर के बीच अन्तर बढ़ता जा रहा है। ऐसे में एक मात्र मनरेगा ही ऐसा कानून है जो समाज में सबसे नीचे बैठे लोगों को मूलभूत अधिकार देता है। न्यूनतम मजदूरी को न मानना पूरी तरह असंवैधानिक है। यह भारत के मानवीय अधिकारों व मूल्यों का खुला उल्लंघन है। भारत सरकार को तुरन्त इस असंवैधानिक नोटिफिकेशन को वापिस लेना चाहिए और साथ ही सभी राज्य सरकारों को इस बात के लिये आश्वस्त करना चाहिए कि भारत में हर मजदूर को न्यूनतम मजदूरी का भुगतान होगा। इस खुले वक्तव्य पर हस्ताक्षर करने वाले प्रमुख लोग निम्न हैं–
1 न्यायाधीश एस0एन0 वेंकटचलैया,भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश । 2 न्यायाधीश जे0एस0 वर्मा, भारत के पूर्व न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय। 3 न्यायाधीश वी0आर0 कृष्णा अयर, भारत के पूर्व न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय।
4 जस्टिस पी0बी0 सावन्त, सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश। 5 जस्टिस के रामास्वामी, सुप्रीम कोर्ट के पूर्व न्यायाधीश । 6 जस्टिस सन्तोष हेगड़े, लोकायुक्त कर्नाटक व पूर्व न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय। 7 जस्टिस ए पी शाह, पूर्व मुख्य न्यायाधीश दिल्ली उच्च न्यायालय। 8 जस्टिस वी0एस0 दवे, पूर्व जज, राज, उच्च न्यायालय । 9 डॉ0 उपेन्द्र बक्शी, प्रोफेसर ऑफ लॉ, दिल्ली विद्यालय। 10 डॉ0 मोहन गोयल, पूर्व कानून के प्रो0 लॉ स्कूल ऑफ इण्डिया, बेंगलोर। 11 फली एस नरीमन, वरिष्ठ अधिवक्ता, सर्वोच्च न्यायालय । 12 कामिनी जायसवाल, वरिष्ठ अधिवक्ता, सर्वोच्च न्यायालय। 13 डॉ0 राजीव धवन, वरिष्ठ अधिवक्ता, सर्वोच्च न्यायालय।
14 प्रशान्त भूषण, वरिष्ठ अधिवक्ता, सर्वोच्च न्यायालय। 15 वृन्दा ग्रोवर, अधिवक्ता दिल्ली उच्च न्यायालय।
समीक्षा– उपरोक्त सभी हस्ताक्षर कर्ता विद्वान हैं, संविधान विशेषज्ञ हैं, वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था की कमजोरियों को समझते हैं किन्तु आवश्यक नहीं कि इन्हें समाज शास्त्र का भी ज्ञान हो। उपरोक्त पंद्रह लोगों में एक न्यायाधीश श्री कृष्णा अयर भी हैं जिन्होंने इन्दिरा जी के आपात्काल के पूर्व इन्दिरा जी की मदद की थी। उस समय श्री अयर ने संविधान संशोधन के संसद के असीम अधिकारों पर प्रश्न नहीं उठाया। चूंकि श्री अयर वामपंथी विचारों के माने जाते हैं तथा सर्वविदित है कि वामपंथी लोग इन्दिरा जी की इमरजेन्सी के प्रशंसक थे। अन्य हस्ताक्षर कर्ता भी संविधान और न्यायपालिका को ही सर्वोच्च व्यवस्थापक मानकर तर्क दे रहे हैं जो ठीक नहीं। भारत की सम्पूर्ण समाज व्यवस्था में राजनैतिक संवैधानिक व्यवस्था के बढ़ते हस्तक्षेप और उसके दुष्परिणाम की इस वक्तव्य में न कोई चिन्ता है न ही समाधान। यह वक्तव्य यह भी प्रमाणित नहीं करता कि न्यायपालिका, संविधान और विधायिका वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था के ही अलग–अलग अंग हैं। इसके विपरीत यह वक्तव्य वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था को मजबूत करने का ही मार्ग प्रशस्त कर रहा है।

वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था भारत में श्रम के स्वाभाविक मूल्य को गिराकर तथा उसके सरकारी मूल्य को बढ़ाकर दो प्रकार के श्रम मूल्यों की योजना बनाती रही है जिससे समाज के श्रमजीवी और बुद्धिजीवी दोनों वर्ग स्वयं को उपकृत मानकर राजनैतिक व्यवस्था की जय जयकार करते रहें। बुद्धिजीवी पूंजीपति वर्ग इसलिये जय जय कार करेगा कि वर्तमान व्यवस्था ने श्रम की मांग को इतना कम करके रखा कि उसका मूल्य बुद्धि और धन की अपेक्षा बहुत कम बढ़े या नहीं बढ़े। दूसरी ओर श्रमजीवी इसलिये जय जय करेगा कि श्रम की मांग और मूल्य बहुत कम होते हुए भी राजनैतिक व्यवस्था ने कुछ अतिरिक्त सहायता करके उन्हें मरने से बचा लिया। उपरोक्त हस्ताक्षर कर्ताओं को संविधान, न्यायालय, कानून, सरकार आदि से उपर कुछ दिखता ही नहीं। यही कारण है कि ये लोग वर्तमान व्यवस्था में श्रम की दुर्गति पर कोई मौलिक सोच प्रस्तुत न करके वही घिसीपिटी मूल्य वृद्धि की मांग रख रहे हैं। श्रम की वर्तमान स्थिति में दो प्रकार की श्रम मूल्य वृद्धि के प्रयास होते रहे हैं। 1 नरेगा के श्रम मूल्य वृद्धि के 2 कानून से श्रम मूल्य वृद्धि के। नरेगा में श्रम मूल्य वृद्धि से बाजार में श्रम का मूल्य भी बढ़ता है तथा मांग भी। श्रम की मांग बढ़ने से श्रम का मूल्य बढ़ना एक शुभ लक्षण है। मैं उपर लिखे विद्वानों की इस सद इच्छा से सहमत हूँ कि सरकार नरेगा का श्रम मूल्य वर्तमान से बढ़ावें। 3 कानून से श्रम का मूल्य बढ़ाना घातक है क्योंकि कृत्रिम उर्जा का मूल्य कम बढ़े और श्रम का मूल्य उर्जा के अनुपात में ज्यादा बढ़े तो यह मूल्य वृद्धि श्रम की मांग को घटाती है। ऐसी मूल्य वृद्धि बाजार में बेरोजगारी बढ़ाती है तथा श्रम मूल्य को बढ़ने से रोकती है। दोनों श्रम मूल्यों में एक खतरनाक अन्तर है। पहली मूल्य वृद्धि पर सरकार रोजगार देने के लिए बाध्य है। दूसरी मूल्य वृद्धि में सरकार और समाज श्रम को मशीन में बदलने के लिये स्वतंत्र है। स्वाभाविक है कि श्रम मूल्य वृद्धि रोजगार को मशीनी उत्पादन की दिशा में स्थानान्तरित करेगी। हमारे ना समझ विद्वान दो प्रकार की श्रम मूल्य वृद्धि के विपरीत प्रभावों का फर्क न समझें तो बताइये कि दोष किसका?

हमारे विद्वान न्यायाधिपति अथवा अधिवक्ताओं को अपनी मांग रखने के पूर्व यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इस मांग के पूरा होने से बढ़ने वाले खर्च के लिये इनके क्या सुझाव हैं। दुनिया जानती है कि भारत सरकार ऐसी मांग पूर्ति के बदले में या तो कृषि उत्पाद पर कर लगा देती है अथवा नये नोट छाप देती है। ये दोनों काम निहायत गुप्त होते हैं जिनमें मियां की जूती मियां का सर हो जाता है। नरेगा में श्रम मूल्य बढ़ाकर कृषि उत्पादों पर कर लगा दिया जाय तो बताइये कि ग्रामीण गरीब श्रमजीवी उत्पादक पर क्या प्रभाव पड़ेगा? सरकार का यह कदम कृषक और मजदूर को एक दूसरे के खिलाफ खड़ा करके स्वयं बिचौलिया बनने में सहायक होता है। श्रम का मूल्य बाजार से अधिक बढ़ा दिया जाता है जो कृषक के लिये कठिनाई पैदा करता है। दूसरी ओर किसान के कृषि उत्पादन पर भारी कर लगा दिया जाता है जिससे वह मजदूर को उतनी मजदूरी देने लायक ही न रहे। इधर सरकार शेष बचे घाटे को पूरा करने के लिये चोरी से नोट छाप लेती है जो अन्त में मुद्रा स्फीर्ति के रूप में प्रगट होती है जिसे यही विद्वान मांगकर्ता मंहगाई कहकर मंहगाई घटाने की मांग करते रहते हैं। आश्चर्य होता है कि ये तथाकथित विद्वान कृषि उपज मूल्य वृद्धि का तो भरपूर विरोध करते हैं किन्तु कृषि उत्पादों पर टैक्स वृद्धि का विरोध कभी नहीं करते। दाल महंगी हो गई यह तो इन विद्वानों को पता है किन्तु दाल पर डेढ़ दो रूपया किलो तथा खाद्य तेल पर आठ रूपये किलो टैक्स है यह इन्हें या तो पता नहीं या ये लोग

पता करना नहीं चाहते। स्वतंत्रता के बाद भारत में श्रम मूल्य में अस्सी प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है अर्थात् यदि सैंतालीस में श्रम मूल्य एक रूपया था तो उसी रूपये की तुलना में आज का श्रम मूल्य एक रूपया अस्सी पैसा हो गया। दूसरी ओर गेहूँ धान मक्का आदि के मूल्य बहुत घट गये। यदि उस समय गेहूँ का मूल्य तेंतीस पैसे प्रति किलो था तो आज घटकर सत्रह पैसा प्रतिकिलो हो गया। हम इन प्रस्ताव करने वाले न्यायाधीशों अथवा वकीलों को तो यह कहकर माफ कर सकते हैं कि इन्हें इतनी बारीकी का पता नहीं किन्तु हम भारत के उन अर्थशास्त्रियों के बारे में क्या सोंचे जो स्वयं को अर्थशास्त्री मानकर लम्बे चौड़े लेख भी लिखते रहते हैं तथा श्रम शास्त्र का इतना मामूली सिद्धान्त भी नहीं समझना चाहते।

मैने पिछले दिनों कई विद्वानों के लेख पढ़े। सबमें दो विपरीत मांगे एक साथ लिखी होती हैं 1 भारत में कृषि उत्पादन लगातार अपेक्षाकृत घटता जा रहा है जो चिन्ताजनक है 2 भारत में कृषि उत्पादों का मूल्य लगातार बढ़ता जा रहा है जो चिन्ताजनक है। ये दोनों निष्कर्ष प्रत्येक लेख मे एक साथ होते हैं और अन्त में एक सुझाव होता है कि कृषि उत्पादन भी बढ़ना चाहिये तथा कृषि उत्पाद मूल्य भी घटना चाहिये। मैंने इन लेखों को पढ़–पढ़ कर बहुत सोचा कि क्या यह संभव है? मुझे लगा कि बिल्कुल ही ना समझी भरे बेसिर पैर के सुझाव हैं? कृषि उत्पाद मूल्य घटेंगे तो उसका उत्पादन घटेगा ही । यह निश्चित है । सन 47 से आज तक कृषि उत्पादन मूल्य लगातार घटते गये। सन सतहत्तर में जब अटल जी की सरकार आयी तब जिस बेरहमी से शक्कर, गेहूँ, चावल को सस्ता किया गया वह आज तक मुझे याद है। मैं उस समय खेती पर ही आश्रित था। मैं उस समय भाजपा का जिला अध्यक्ष था। मैं एक तरफ तो सभाओं में मंहगाई खतम होने पर उपभोक्ताओं की वाहवाही लूटता था तो दूसरी ओर खेती में बढ़ रहे घाटे से भी चिन्तित रहता था। कुछ ही वर्षों बाद मैंने लुट पिटकर खेती बन्द कर दी। यदि मैं खेती बन्द करने की बुद्धिमानी नहीं करता तो मेरे परिवार में मैं अपनी मूर्खता का इतिहास बना देता। मैं जानता हूँ कि आज भी मेरे परिवार के लोग भाजपा की उस नीति का गुणगान करते रहते हैं कि सरकार ने सभी वस्तुओं को बहुत सस्ता कर दिया था। उन बेचारों को क्या पता कि उस सस्ती ने मुझ जैसे हजारों किसानों को खेती छोड़ने पर मजबूर कर दिया। आज तक सरकार कृषि उत्पादों की मूल्य वृद्धि को विपरीत दिशा में ले जाकर उसे सस्ता कर रही है। यदि मुद्रा स्फीति नौ प्रतिशत है तो धान गेहूँ आदि कृषि उत्पादों का मूल्य छः सात प्रतिशत बढ़ाकर सरकार किसानों के साथ छल करती रहती है। डीजल पेट्रोल की मूल्य वृद्धि तो उससे भी कम चार पांच प्रतिशत तक ही सीमित रखती है जबकि कृषि उत्पादों पर लगने वाला उसका टैक्स अपने आप मूल्यानुसार बढ़ता रहता है। बिना हो हल्ला के इस वर्ष वेट का कर पच्चीस प्रतिशत बढ़ाकर चार से पांच कर दिया गया और न इस घपले को गड़करी समझ पाये न ही प्रकाश करात ।

सीधी सी बात है कि उत्पादन वृद्धि के लिये मूल्य वृद्धि करनी ही होगी। यह मूल्य वृद्धि भी ज्यादा करनी होगी। जब ज्यादा मूल्य वृद्धि होगी तब कृषि उत्पादन बढ़ेगा और जब कृषि उत्पादन बढ़ेगा तब कृषि उत्पादों के मूल्य घटेंगे। इसके अलावा कोई अन्य उपाय नहीं है। यदि कोई अन्य उपाय है तो कोई अर्थशास्त्री वह उपाय बताता क्यों नहीं? स्वाभाविक है कि उनके पास कोई उपाय तो है नहीं और लेख लिखना उनकी मजबूरी है क्योंकि बहुतों का तो व्यवसाय ही आंदोलन चलाना या संगठन बनाना अथवा लेख लिखना है। फिर भी मेरी इच्छा है कि आंदोलन कारी, एन0जी0ओ0 अथवा व्यवसायी लेखक चाहे जो लिखें किन्तु सम्मानित पूर्व न्यायाधीश अथवा अधिवक्ताओं को आर्थिक विषयों पर कोई गंभीर सुझाव देने के पूर्व कई बार सोचना चाहिये। नरेगा में श्रम मूल्य बढ़ना ही चाहिये। किन्तु साथ साथ यह बात भी जुड़ी होनी चाहिये कि किसी भी स्थिति में कृषि उपज पर टैक्स बढ़ाकर उसकी भरपाई नहीं की जायगी। गांधी जी ने कहा था कि हमें अपनी सुविधाओं की तुलना करते समय समाज के न्यूनतम सुविधा प्राप्त व्यक्ति की स्थिति का भी ध्यान रखना चाहिये। इसी तरह मेरा सुझाव है कि हमें किसी भी प्रकार की आर्थिक नीति बनाते समय ''गरीब ग्रामीण श्रमजीवी किसान'' इन चारों की मिली जुली स्थिति का भी ध्यान रखना चाहिये। इसका अर्थ यह हुआ कि हमारी पूरी की पूरी अर्थव्यवस्था मध्यवर्ग शहरी बुद्धिजीवी उपभोक्ता को ध्यान में रखकर बनाई जा रही है जो पूरी तरह गलत है। इसे बदलने की जरूरत है। हमारे खुला पत्र लेखक न्यायाधीशों तथा अधिवक्ताओं को अपने पत्र पर दुबारा विचार करना चाहिये और मांग के साथ–साथ सुझाव भी देने चाहिये। इस पत्र मे सुप्रीम कोर्ट के कुछ निर्देशो का जिस प्रकार बेरहमी से उपयोग किया गया है वह भी सुझाव कर्ताओ की सोच को दर्शाता है। ऐसा लगता है जैसे कि सुप्रीम कोर्ट ही एक मात्र सारी स्थिति को समझता है। पूर्व न्यायाधीश अब न्यायाधीश नही है, और न ही वे किसी कानून की समीक्षा कर रहे है। वे सामाजिक समस्या की समीक्षा कर रहे है तो उन्हे सामाजिक संदर्भो का भी ध्यान रखना चाहिये। हर लाइन मे कही न कही सुप्रीम कोर्ट के आदेश का उल्लेख कोई अच्छी परंपरा नही है।

नोट –उपरोक्त प्रश्नोत्तर अंक 226 वर्ष दो हजार ग्यारह का है। पाठक आर्थिक आंकडे मुद्रा स्फीति के साथ जोडकर पढने की कृपा करे।

श्री फरीद जकारिया दैनिक भास्कर बारह अक्टूबर

विचार– जब टेलीविजन एंकर बिल माहर अपने साप्ताहिक शो मे घोषणा करती है कि मुस्लिम विश्व मे बहुत कुछ आई एस आई एस जैसे है, और शो के मेहमान सैम हैरिस उनसे सहमति जताते हुए कहते है इस्लाम खराब विचारो का उदगम है तो मै समझ सकता हूँ कि अतिश्योक्ति की गई है। और इसके बावजूद मै कहूंगा कि वे एक हकीकत भी बयान कर रहे थे। मै इस्लाम को हिंसक और प्रतिकियावादी बताने के खिलाफ दी जाने वाली सारी दलीले जानता हूँ । जब भी ऐसा कुछ कहा जाता है । यही दलीले दी जाती है। यही की इसके 1.60 अरब अनुयायी है। इंडोनेशिया और भारत जैसे देशो मे करोडो मुस्लिम रहते है, जो इस खाचे मे फिट नही होते। यही वजह है कि माहर और हैरिस निर्लज्ज सरलीकरण के दोषी है लेकिन इमानदारी से कहे तो इस्लाम के साथ समस्या तो है । इस बात से कौन इनकार कर सकता है। आकडे इसकी गवाही देते हैं दुनिया के जिन भी हिस्सो को आधुनिक दुनियां से ताल मेल बैठाने मे

दिक्कत आ रही है। वहां अनुपात से ज्यादा मुस्लिम हैं इसमे कोई शक नही है। पिछला इतिहास देखे तो पता चलेगा कि वर्ष 2013 मे आतंकवादी हमले करने वाले 10 शीर्ष गुटो मे से सात मुस्लिम बहुसंख्यक है। इस बीच प्यू रिसर्च सेंटर ने धार्मिक स्वतंत्रता को लेकर सरकारे जो पाबंदियां लगाती है, उसके आधार पर देशो को रैटिंग दी है। इस रिसर्च एजेंसी ने पाया कि सबसे ज्यादा पाबंदिया लगाने वाले 24 देशो मे से 19 देशो मे मुस्लिम बहुसंख्यक है। अपना धर्म छोडने के खिलाफ जिन 21 देशो मे कानून है उन सारे देशो मे मुस्लिम बहुसंख्यक है। कहना होगा कि आज इस्लाम मे अतिवाद कैंसर की तरह फैला हुआ है। मुस्लिमो मे ऐसे लोग बहुत थोडे है जो हिंसा व असहिष्णुता के पैरोकार है। और महिलाओ तथा अल्पसंख्यको के प्रति प्रतिकियावादी रूख रखते है। हालांकि कुछ लोग इन अतिवादियो का विरोध करते है। लेकिन एक तो उनकी संख्या नाकाफी है। यानी जितनी होनी चाहिये उतनी नही है। और दूसरा यह कि यह विरोध इतना प्रखर नही है । अब इसी तथ्य को लीजिये कि खून खराबे मे लगे इस्लामिक स्टेट के खिलाफ अरब जगत मे बडे पैमाने पर कितनी रैलियां निकाली गई है। सारी दलील मे यह जानना महत्वपूर्ण है कि इस्लाम आज किस दौर से गुजर रहा है? माहर और हैरिस के विश्लेषण की केन्द्रीय समस्या यह है कि वे इस्लाम मे अतिवाद की हकीकत को लेकर उसका वर्णन ऐसे करते है जैसे यही सब कुछ इस्लाम मे आधारभूत ढंग से अंतर्निहित है। मैहर कहते है इस्लाम एकमात्र ऐसा धर्म है जो माफिया की तरह व्यवहार करता है। यदि आपने कोई गलत बात कह दी, कोई गलत चित्र बना दिया या गलत किताब लिख दी तो यह आपको मार डालेगा। जहां तक ऐसी घटनाओ मे कूरता का सवाल है तो वे बिल्कुल सही कह रहे है। लेकिन इसे कुछ मुस्लिमो की बजाय इस्लाम के साथ जोडना गलत है। यदि 1.60 अरब मुस्लिम इसी तरह सोच के रहे होते तो माहर अब तक मारे जा चुके होते। हैरिस को अपनी विश्लेषण क्षमता पर बहुत गर्व है। वे पी एच डी है जो कोई छोटी मोटी उपलब्धि नही है। हालांकि मैने ग्रेजुएट के दौरान सीखा था कि किसी बदलती स्थिति को आप किसी स्थिर कारण के आधार पर व्याख्या नही कर सकते। इसलिये आप यदि यह कह रहे है कि हिंसा असहिष्णुता इस्लाम के भीतर ही मौजूद है, और वह सारे बुरे विचारो का उदगम है तो चूंकि इस्लाम दुनियां मे 14 सदियों से मौजूद है तो हमे इन 14 सदियो मे ऐसा ही व्यवहार देखने को मिलना चाहिये। यदि इस्लाम मे ऐसा है तो इतिहास के पूरे दौर मे ऐसा दिखाई देना चाहिये। हैरिस को जाकरी कैलाबेल की किताब पीस बी अप आन यू फोर्टीन सेंचूरीज आफ मुस्लिम किश्चियन एंड जूइश कांन्फिलक्ट एड कोआपरेशन पढनी चाहियें । ऐसा भी वक्त था जब इस्लाम आधुनिकता के शिखर पर था और आज जैसा वक्त भी रहा है, जब तरक्की की दौड मे पिछड गया।` मुझे यदि आप पिछले 70 साल के लगभग का समय दे तो इसाई जगत की तुलना मे आमतौर पर इस्लाम सबसे सहिष्णु अल्प संख्यक समुदायों मे से रहा है। यही वजह है कि 1980 के दशक की शुरूआत तक अरब जगत मे 10 लाख से ज्यादा यहूदी रह रहे थे। इसमे करीब 2 लाख तो इराक मे ही थे। यदि ऐसा दौर था जब मुस्लिम जगत खुला, आधुनिक, सहिष्णु और शान्तिपुर्ण था तो इससे पता चलता है कि धर्म मे कोई आधारभूत समस्या नही है, और चीजे एक बार फिर बदल सकती है। उसे सकारात्मक रूप दिया जा सकता है। फिर माहर क्यो ऐसी टिप्पणियां कर रहे है? मुझे लगाता है कि सार्वजनिक क्षेत्र मे सकिय बुद्धिजीवी के रूप मे उन्हे लगता है कि उन्हे कडवा सच बोलना चाहिये । यानी वह सच जो देख रहे है। हांलांकि यह सच बहुत सरलीकृत तथा अतिशयोक्ति पूर्ण है। निश्चित ही सार्वजनिक क्षेत्र के बुद्धिजीवियो के सामने करने के लिये एक और काम है। दुनियां मे अच्छे के लिये बदलाव लाना अच्छाई को सामने लाना । विश्व कल्याण करना। क्या वाकई उन्हे लगता है कि इस्लाम की तुलना माफिया के साथ करने से ऐसा होगा ? हैरिस कहते है कि वे चाहते है कि ऐसे मुस्लिम अपने धर्म मे सुधार लाये जो आस्था को उतनी गंभीरता से नही लेते। तो इस्लाम को सुधारने की रणनीति यह है कि 1.60 अरब मुसलमानो से यह कहना कि उनका धर्म दुष्टता पूर्ण है हैरिस को यह कहना बंद कर देना चाहियें जब तक ज्यादातर पाक साफ और सच्चे अर्थो मे धर्मनिष्ठ है। इस रास्तें से तो इसाई धर्म अपने सदियां के क्रूसेड धर्म अदालतो डायनो को जलाने और असहिष्णुंता के दौर से बाहर आकर आधुनिक स्थिति मे नही आया था। इसके विपरीत बुद्धिजीवियों व धर्मशास्त्रियो ने इसाई धर्म को प्रोत्साहन दिया जो सहिष्णु और उदार थे। इसके साथ उन्होने धर्मनिष्ठ इसाइयों को गर्व करने के कारण दिये। सम्मान के साथ सुरक्षा। यही तरीका समय के साथ इस्लाम मे सुधार लायेगा। बहस मे बहुत कुछ दांव पर लगा है। आप या तो बनाने का प्रयास कर सकते है या आप विस्फोट स्थिति ला सकते हैं। मुझे विश्वास है कि माहर दूसरी राह अपनाने का प्रयास शुरू नहीं करेगे।

समीक्षा– एक मुसलमान होते हुए भी आपने इस्लाम की इमानदारी से समीक्षा की हैं यदि इस प्रकार की इमानदार समीक्षा करने वाले भारत की कुल मुस्लिम जनसंख्याा मे एक प्रतिशत तक भी हो जावे तो भारत से संपूर्ण साम्प्रदायिक कटुता समाप्त हो सकती है। यदि ऐसा संभव हो जावे तो संघ शिवसेना विश्व हिन्दु परिषद के लोग बेरोजगार हो जायेंगे। क्योकि उनकी जरूरत ही नही रहेगी। ऐसा होते ही भारत पारिकस्तान की सरकारे एक जुट होकर इस्लामिक आतंकवाद से मुकाबला कर सकेगी। लेकिन यह सब तब होगा जब भारत की बीस करोड की आबादी मे आप सरीखे लोगो की संख्या यदि बीस लाख न भी हो तो कम से कम दो लाख तो हो । लेकिन या तो ऐसी स्वतंत्र सोच रखने वाले मुसलमान उंगली पर गिनने लायक ही है या है भी तो डरे हुए है।

आपने भी सत्य को बहुत बचकर लिखा है । आपके लेख का उपर का तीन चौथाई भाग सत्य के निकट है और नीचे का एक चौथाई अपनी सुरक्षा के हिसाब से। इस्लाम के विषय मे टेलिविजन चैनल के ऐंकर बिल माहर तथा मेहभान सेम की नजर मे भारत का मुसलमान कैसा है या अरब जगत मे कैसा है वह सुनी सुनाई बाते है। इस्लाम बहुत अच्छा रहा होगा अथवा वर्तमान मे भी अरब देशो मे अच्छा हो सकता हैं किन्तु वर्तमान मे हम भारत पाकिस्तान बंगला देश अफगानिस्तान मे इस्लाम का जो रूप देख रहे है वह तो आपके कथन के बिल्कुल विपरीत है। पारिकस्तान मे मुसलमान क्या संख्या वृद्धि के लिये बल प्रयोग का सहारा नही ले रहे । भारत मे भी मुसलमान मोदी के पूर्व हिन्दुओ को दूसरे दर्जे का नागरिक मनवाने के लिये लगातार प्रयत्नशील नही रहे क्या? यह तो पूरी दुनियां के लिये एक विचित्र बात है कि भारत का बहुसंख्यक तो समान नागरिक संहिता की बात करे और अल्पसंख्सक धर्म परिवर्तन की छूट की बात करे जबकि सारी दुनियां मे इसके विपरीत होता है कि बहुसंख्यक धर्म परिवर्तन का समर्थन करता है और अल्पसंख्यक विरोध। यह आश्चर्य आपको दुनिया मे नही मिलेगा। पाकिस्तान और बंगला देश मे तो इससे उल्टा भी मिल सकता है। किन्तु भारत मे तो है । भारत के ही एक प्रदेश कश्मीर से बहुसंख्यक मुसलमानो के डर से कश्मीरी पंडितो का पलायन क्या सच नही है? आपने ऐंकर बिल माहर को मुलसमानो के

स्वयं सुधरने की प्रकिया पर विश्वास करने और सहयोग करने की सलाह दी है। किन्तु मै नही देखता कि भारत का मुस्लिम बहुमत सामान्य परिस्थितियों मे अपनी सोच बदल चुका है। नरेन्द्र मोदी के आने के बाद पूरे देश के मुसलमानो के सोच मे जो बदलाव दिख रहा है वह संतोष जनक तो है किन्तु अब तक यह साफ नही कि उनकी सोच मे बदलाव है या परिस्थिति जन्य प्रतीक्षा । यदि सोच मे बदलाव होता तो उत्तर प्रदेश मे भी बदलाव दिखता किन्तु उत्तर प्रदेश का मुसलमान अब भी बादल को रोकने के लिये हाथ उठाकर कोशिश कर रहा है ।

मै अब भी इस मत का हूँ कि कुछ दिन यदि ऐसी हालत रही तो भारत का मुसलमान भारत मे समानता के स्तर पर जीना सीख लेगा। भारत का हिन्दू संघ खेमे मे न चला जावे इसके लिये आवश्यक है कि भारत का मुसलमान भारत को दारूल इस्लाम बनाने का सपना देखना बंद कर दे और भारत को दारूल अमन बनने मे सहायक हो जावे तो मुझे पूरा विश्वास है कि भारत मे संघ परिवार और हिन्दुओ के बीच ही टकराव की स्थिति संभव है।

उत्तरार्ध

–धर्म–दर्शन, राज्य और धर्मनिरपेक्षता (आचार्य पंकज)

हमारे देश में वैज्ञानिक, बुद्धिवादी चिन्तन की एक समृद्ध परम्परा रही है। धर्म और दर्शन इस परम्परा के अविभाज्य अंग है। धर्मनिरपेक्षता की आधुनिक अवधारणा के समर्थन में जब हम वैज्ञानिक,बुद्धिवादी चिन्तन परम्परा की ओर नजर दौड़ाते हैं तब धर्म और दर्शन के चिन्तन पर ध्यान दिये बगैर हम नही रह सकते।

धर्मनिरपेक्षता, धर्मविज्ञान और धर्म तथा दर्शन के आपसी रिश्तो के बारें में धर्मनिरपेक्षता,आधुनिक समाज की जरुरतों के आधार पर बनायी गयी धारणा है,यह मानव के धार्मिक चेतना पर उसकी वैज्ञानिक बुद्धिपरक चेतना के बढ़ते प्रभाव का संकेत करती हैं। दर्शन और धर्म के बीच गंभीर अन्तर विरोध है। धर्म जहॉ बुद्धि के बजाय भावना पर बल देता है,साम्प्रदायिक निष्ठा की मॉग करता है, वहॉ दर्शन बुद्धि पर बल देता है मानव चेतना को स्वतंत्र चिन्तन की दिशा में ले जाता है। इसलिये धर्मनिरपेक्षता कहीं आधुनिक अवधारणा के पक्ष में जाती हैं जब हम कहते है कि आधुनिक समाज में मानवीय चेतना धर्मनिरपेक्ष हो रही है। इसका अर्थ यही है कि ऐतिहासिक विकास की मंजिल पर मानव चेतना धार्मिक विचारों के प्रभाव से मुक्त हो रही है। अब उसके लिये यथार्थ और जीवन से संबंधित लोकातीत सत्ता की अवधारणा प्रासंगिक नहीं रह गयी है, अब यथार्थ और जीवन की व्याख्या यथार्थ और जीवन के माध्यम से ही करने में समर्थ हो गयी है,इस जगत और जीवन से परे ऊपर स्थित (ब्रह्ममलोक) किसी और जगत तथा जीवन की कल्पना करना दूसरे जगत या जीवन के माध्यम से ही इहलौंकिक जीवन की व्याख्या करना, धर्म की आम विशेषता रही है। धार्मिक चेतना ऐसा करते समय कहीं न कही मनुष्य के इहलौंकिक जीवन की वास्तविकता का भी निषेध करती है, वह ईश्वर (गाड–खुदा)रुप में एक ऐसी सत्ता की कल्पना करते हैं जो समूचे ब्रहमाण्ड(प्राकृतिक पिण्ड)का सचेतन ढंग से नियत्रंण करती है। इस अर्थ में ईश्वर की धारणा मनुष्य की स्वतंत्रता के विरोध में जाती है,अगर ईश्वर है, तो मानव स्वतंत्र नहीं है चूँकि मनुष्य एक हद तक स्वतंत्र है और अपनी स्वतंत्रता के क्षेत्र का लगातार विस्तार कर रहा है,एतदार्थ ईश्वर नही हैं। धार्मिक चेंतना का विकास आमतौर पर मनुष्य की दासता,असहायता और अज्ञान की परिस्थितियों मे हुआ। उन परिस्थितियो मे उसे अपनी दासता ,असहायता और अज्ञान का तीखा अहसास था परन्तु उन्हें समाप्त करने के लिये जरुरी भौतिक और आध्यात्मिक साधन उसके पास सुलभ नही थे। इसी हालत में मनुष्य के बाहर और भीतर की अनियन्त्रित शक्तियॉ रहस्यमय रुप अख्तियार कर लेती थी, उसकी पहुँच और पकड़ से परे लगती थी। दासों की दुनियॉ से अलग स्थित मालिकों की दुनियॉ की तरह कल्पना की एक अलग दुनियॉ बना लेती थी। जो मुक्त जीवन मे संभव न थी उसे हासिल करने के लिये जीवन से परे के लोक में जाना समझा जाता था।

दासता,असहायता और अज्ञान की परिस्थितियां, इनसे मुक्ति की छटपटाहट से पैदा हुई यह पारलौकिक चेतना चूँकि यथार्थ और वास्तविकता से कट जाती थी इसलिये इसे बनाये रखने के लिये अनुभव, बुद्धि की अपेक्षा निष्ठा या श्रद्धा तथा विश्वास पर बल दिया जाता था। परजीवी शासक वर्ग अपने हितों के लिये धर्म की अबौद्धिक व्यवस्था को मजबूत करता था और उसे सत्ता के एक दमनकारी आध्यात्मिक संस्थान के रुप में संगठित करता था। इसके अतिरिक्त धर्मो के अपने–अपने मठ,महन्थ,सम्प्रदाय, मंदिर, मस्जिद,चर्च ,इमाम और पादरी इत्यादि भी होते थे,जो आर्थिक और सामाजिक सुविधाओं का प्रतिष्ठान बन जाने के कारण धार्मिक एक निष्ठता को बढ़ावा देते थे। अबौद्धिक और पारलौकिक चेतना से युक्त होने के अलावा धर्म की दूसरी आम विशेषता, साम्प्रदायिक एक निष्ठता की मॉग कर रही है।

आधुनिक युरोप का विकास दो स्तरों पर हुआ है,पहले स्तर पर सामाजिक –राजनीतिक शक्तियों का द्वन्द और संघर्ष दिखायी पड़ता है। पिछड़ी सामन्ती शक्तियों के खिलाफ सत्ता का दावेदार एक नया वर्ग उभरता है। पूँजीपति वर्ग। यह सामन्तवाद के खिलाफ अपने संघर्ष में आम जनता को भी अपने साथ ले लेता है। दूसरे स्तर पर सामन्ती व्यवस्था से अभिन्न रुप से जुड़ गये और सत्ता के स्वतंत्र प्रतिष्ठान में बदल गयें, चर्च के खिलाफ विज्ञान और टैक्नालौजी का उदय होता है। अनुभव और बुद्धि पर बल देने वाली दार्शनिक पद्धतियॉ नयी मंजिल पर ले जाती है। दुनियॉ की व्याख्या के लिये ईशु की धारणा गैर जरुरी हो जाती है। भौतिकवादी तथा निरीश्वरवाद की विचारधारा मजबूत होती है।(डॉ0 हेगेल,जर्मनी)

इस तरह धर्मनिरपेक्षता अपने प्राथमिक अर्थ में एक ऐसी धारणा के रुप में विकसित होती है जो यथार्थ और जीवन के ज्ञान और मानव मुक्ति के लिये लोकातीत सत्ता के विचार को अनावश्यक करार देती है। दुनियॉ की व्याख्या और परिवर्तन के लिये मनुष्य की बुद्धि और व्यवहार को पर्याप्त समझती है। धर्मनिरपेक्षता लोकातीत से लोक की ओर,भ्रान्ति से ज्ञान की ओर परमंत्रता से स्वतंत्रता का ओर मनुंष्य के लम्बे अभियान के दौरान निर्मित विश्वदृष्टि की एक धारणा है। यह विश्वदृष्टि यथार्थ और जगत की सत्ता में विश्वास करती है।मानवेतर या लोकातीत सत्ता के हस्तक्षेप के बगैर मनुष्य की मुक्ति को संभव बताती है। धर्मनिरपेक्षता धर्म के प्रति तटस्थता का रूख नही अपनाती। वह अपने को धार्मिक विश्वदृष्टि के विरोध में सक्रिय रुप से स्थापित करने की ओर अग्रसर होती है।

इसलिये किसी व्यक्ति या समूह के बारे में यह कथन सत्य नहीं कि वह धर्मनिरपेक्ष तथा धार्मिक एक साथ है। जो व्यक्ति स्वयं किसी धर्म के प्रतिनिष्ठा रखता है वह दूसरे धर्मों के प्रति निरपेक्ष हो सकता हैं? धर्मनिरपेक्षता और धार्मिकता परस्पर विरोधी धारणायें हैं।

यहॉ हम धर्मनिरपेक्षता की दूसरी गौंण धारणा पर आते है। इसके अनुसार विभिन्न धर्मो के सन्दर्भ में राज्य निरपेक्षता का रुख अख्तियार करता है। राज्य,धर्मनिरपेक्ष होता है। असल में यह धारणा भी कैथोलिक प्रोटेस्टेण्ट और यहूदी आदि विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों या धर्मो के परस्पर संघर्ष के सन्दर्भ में पहले पहल युरोप में विकसित हुई। राजनीतिक धारणा के रुप में धर्मनिरपेक्षता का अर्थ यह माना गया कि राज्य किसी धर्म को न अपनायेगा न ही उसे संरक्षण देगा। धर्म को सामाजिक लौकिक जीवन में हस्तक्षेप करने से रोकेगा और स्वयं किसी व्यक्ति के धार्मिक विश्वासों में दखल नहीं देगा। इसका अर्थ हुआ कि राज्य जिस विचारधारा के आधार पर काम करेगा, वह धार्मिक न होगा।वह धर्म कों प्रोत्साहित करने के बजाय धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों का प्रचार कर इसे निरूत्साहित करेगा।

पश्चिम के पूँजीवादी राज्य शोषण की व्यवस्था कायम रखने के लिये धर्म के रुप में भ्रांत चेतना को बनाये रखना चाहतें हैं। इसलिये उनकी धर्मनिरपेक्षता जरुरत के अनुसार कभी धर्मों के प्रति समानता में,कभी किसी धर्म के प्रति तटस्थता में और कभी किसी अन्य धर्म के प्रति प्रोत्साहन में बदल जाती है। सच्चे मायनों में धर्म निरपेक्ष राज्य वही रह सकता है जो शोषण ,दमन,और परतंत्रता की व्यवस्था का अन्त करने में सक्रिय हो, सामाजिक जीवन में धर्म का हस्तक्षेप नहीं होने देता हो, व्यक्तियों की धार्मिक मान्यताओं के मामले में शक्ति का इस्तेमाल किये बगैर धर्म निरपेक्ष या यथार्थपरक विचारों और मुल्यों के प्रचार–प्रसार के जरिये उन्हें भ्रान्त चेतना से मुक्त होने में सक्रिय मद्द करता हो। मेरी दृष्टि में ऐसा एक समाजवादी राज्य ही कर सकता है। इसलिये धर्मनिरपेक्षता समाजवादी (समाज को सर्वोच्च मानने वाला) राज्य की धारणा का अभिन्न अंग है।

धर्म की शरण में जाना बौद्धिक स्वतंत्रता का समर्पण करने के बराबर है,चाहे वह धर्म बुद्ध जैसे स्वतंत्र बुद्धिजीवी ने क्यों न बनाया हो। बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिये उसमें दीक्षित राजाओं ने शस्त्र–बल का उपयोग भले न किया हो किन्तु यह तो साफ है कि राज्याश्रय पाते ही बौद्धधर्म शक्ति और सत्ता का एक प्रतिष्ठान बन गया। शायद सनातन धर्म के पुनरुत्थान में संगठित विचार प्रस्तुत करने गीता ने ''धम्मम् शरणम् गच्छामि'' धर्म की शरण में जाता हूँ कि तर्ज पर उसके निषेध में सर्व धर्मान् परितेज्य मामेकम् शरणम् ब्रज की अपील की होगी।

वैज्ञानिक चिन्तन और रहस्यवादी प्रवृत्ति,लोक और लोकातीत ,जगत और जीवन की स्थापना और जगत और जीवन का निषेध,गति और गतिहीन विराम मुक्त जीवन से मुक्ति परस्पर पूरक धारणायें नहीं है, ये परस्पर विरोधी हैं और इनमें से किसी एक को चुनना होगा। स्वतंत्रता का निषेध करने वाली अबौद्धिक प्रवृति को समाज की जरुरतों के लिये अप्रासंगिक होने के कारण छोड़ना होगा। धर्म–दर्शन की यह अलौकिक बुद्धिवादी विचारों की विरासत से हम अपनी धर्मनिरपेक्ष दृष्टि को और समर्थ बना सकेंगे।

आधुनिक भारत में धर्मनिरपेक्ष की स्थिति बहुत नाजुक दिखायी पड़ती है। ब्रिटिश उपनिवेशवाद के खिलाफ चलने वाले लम्बें संघर्ष के दौरान बुद्धिवादी वैज्ञानिक दृष्टि की एक धारणा सक्रिय रही जो पतनशील सामन्ती मूल्यों तथा औपनिवेशित पूँजीवादी मूल्यों और विचारों से भारतीय जनमानस को मुक्त करना चाहती थी,मगर प्रभावी विचारधारा पुनरोत्थानवादी थी। सनातन या हिन्दी (हिन्दु0) धर्म का महत्व काफी सबल था। कई बड़े विचारक और नेता वेदान्त को भारतीय प्रतिभा का चरमशिखर मानते थे। दर्शन के क्षेत्र में साम्प्रदायिक रुख अपनाते थे । गॉधीजी कभी भी धर्म के प्रति निरपेक्षता का भाव नही रखते थे। वह हिन्दू धर्म के खुले उपासक थे और अपनी दैनिक प्रार्थना में ईश्वर और अल्लाह को समान रुप से पुकारते थे। नेहरु ने जरुर एक हद तक धर्मनिरपेक्ष की दृष्टि अपनायी, लेकिन वे भी समय–समय पर धार्मिक मानयताओं और संस्थाओं को बढ़ावा देते थे। शासक वर्ग का आम रवैया अपने शोषण परक हितों के लिये धर्म को बनाये रखने का रहा है।चुनाव की राजनीति ने साम्प्रदायिकता को बढ़ावा दिया है। धर्म के नाम पर भारत– विभाजन की त्रासदी घटित होने के पश्चात् भारत वर्ष में हिन्दू–मुस्लिम की धुर साम्प्रदायिक चेंतना को लगातार प्रश्रय मिला है आज शासक वर्ग की तथाकथित धर्मनिरपेक्षता ने हिन्दू–मुस्लिम,हिन्दू–सिख के बीच साम्प्रदायिक खून–खराबे का स्वरुप ग्रहण कर लिया है।कुल मिलाकर धर्म निरपेक्षता न तो हमारे समाज की आम विचार व्यवहार का अंग बन पायी है और न राज्य उसे सही मायनो मे बरत रहा है। यह दुर्भाग्य पूर्ण स्थिति है । अगर हम इस पर काबू पाना चाहते हो तो हमें पूरी दृढ़ता के साथ इहलौकिक और बुद्धिवादी विचारधारा का आन्दोलन चलाना होगा उसे जनता के एक नये किस्म के मुक्ति आन्दोलन से जोड़ना होगा।हमें मुक्ति चाहिये,जीवन से नही। जीवन में। इसी जीवन में। इसी दुनिया में मुक्ति चाहिये।

(सन्1978 ई0 में भारतीय प्रतिनिधि के रुप में लैटिन अमेरिका के क्यूबा में विश्व भर के युवा प्रतिनिधियों के समक्ष आचार्य पंकज का अविकल भाषण हिन्दी भाषामें।)

उत्तर–आपका लेख तीस वर्ष पूर्व दिये गये आपके भाषण का अक्षरशः वाक्यांश है। लेख दो बार पढ़ने के बाद भी मेरी योग्यता से उपर के स्तर का है। अतः मैं समीक्षा का दायित्व पाठको पर छोड़ता हूँ।

एक दिसम्बर से पंद्रह दिसम्बर 2014 तक का जन जागरण भ्रमण का विस्तृत कार्यक्रम

89	1/12/14	9 बजे	जगत नारायण सिंह 09931477881	श्री अखिलेश पाण्डेय, प्रधानाध्यापक से0 नि0, ज्योतिषि टोला,डुमर नरेंद्र,वाया भोरे, गोपालगंज बिहार	भोरे, गोपालगंज 09934457673
90	1	1बजे	सुरेश त्यागी	मोतिलाल प्रसाद अधिवक्ता व्यवहार न्यायालय,गोपालगंज बिहार	गोपालगंज 9430624275
91	1	6 बजे	सुरेश चंद्र त्यागी 9955540718	जगमोहन तिवारी, हेडमास्टर, के0 पी0 उच्च वि0 मुसहरी हाईस्कूल , मुसहरी गोपालगंज बिहार	मुसहरी 9006409414 9471663690
92	2	11 बजे	रमेश कुमार चौबे 8435023029	ब्रजकिशोर सिंह सचिव, गॉधी स्मारक एवं सुग्रहालय, मोतिहारी पूर्वी चंपारण बिहार	9431233090
93	2	6 बजे	रमेश कुमार चौबे 8435023029	श्री सतेंद्र तिवारी अधिवक्ता व्यवहार न्यायालय, सीताम0ढी शांति नगर आई टी आई के नजदीक डुमरा सीतामढी बिहार	9931140897
94	3	10 बजे	रमेश कुमार चौबे 8435023029	हेम लाल विश्वकर्मा , कनहौली मठ रोड, (माई स्थान)कस्तुरबा मार्ग,पो0–रमना,मुज्जफरपुर बिहार	रमना, 9431404496
95	3	4 बजे	रमेश कुमार चौबे	अजीत कुमार चौधरी, ढोली बाजार मुज्जफरपुर बिहार	9934293529

96	4	10बजे		राहुल कुमारपुत्र जगन्नाथ राय ग्रा0–सुघरान वाया बैथन,दरभंगा बिहार	9835587830
97	4	3 बजे		कैलाश साहू (एड0) मधुबनी कृष्ण देव महतो एड0, सहअपरलोक अभियोजक, व्यवहार न्यायालय झंझारपुर मधुबनी ,बिहार	झंझारपुर मधुबनी 9931232373
98	5	9 बजे		देवनाथ देवन , सुंदर विराजित, मधुबनी	सुंदर विराजित 9871239586
99	5	3 बजे		लोकेंद्र भारती, जिला खादी ग्रामोधोग संघ,डी बी रोड,सहरसा ,बिहार	सहरसा 9470809777
100	6	9 बजे		शमशाद आलम, ग्राम–चंदा, कबीर टोला– पो0–पैना, थाना–चौसा, जिला–मधेपुरा विहार	चौसा मधेपुरा 9910824294
101	6	1 बजे		श्री सत्यनारायण मेहता आर टी आई कार्यालय ,चरने,सुपौल बिहार	चरने,सुपौल 9910824294
102	6	6 बजे		श्री सत्यनारायण यादव,पूर्व प्रमुख नरपतगंज,वार्ड क0–3 सुलतान पोखर, फारबिसगंज, अररिया, बिहार	फारबिसगंज, 9755727604 9304320757
103	7	9 बजे		अरशद अली, गॉव बसगढा, पो0 चपहरी,थाना–रूपौली पूर्णियॉ, बिहार	बसगढा, चपहरी 9871239586
104	7	2 बजे		राजेश मिश्रा, विद्या बिहार इंसटिट्युट आफ टेक0,इंडस्ट्रीयल ग्रोथ सेंटर मारंगा पूर्णियॉ, बिहार	मारंगा पूर्णियॉ 7781005263 9798518309
105	8	10बजे		श्री टी0 पी0 जालान, खगडिया बिहार	खगडिया बिहार 9386473929
106	8	2 बजे		रंजन कुमार , भारद्वाज नगर, मोहन एच यू , मिर्जापुर वनद्वार, वेगुसराय, बिहार	वेगुसराय, बिहार 9931958388
107	9	10बजे		एनुल हक्क, खराज, हकिमाबाद, पो0 जितवारपुर खराज, समस्ती पुर बिहार	खराज, समस्ती9631086896
108	9	3 बजे		श्री विनोद कुमार पाण्डे, गॉव नवादा कला, हाजीपुर, वैशाली बिहार	सहदुल्लापुर, 9939460577
109	10	10बजे		शत्रुंजय कुमार साहु सिवान, सिद्धार्थ जी द्वारा	माधोपुर 9868664655
110	10	3 बजे		श्री बबलू राही,पुत्र सैयद मुबारक नवाब,नई बाजार,छपरा बिहार	नई बाजार,छपरा 9835080080
111 ,11 2	11/ 12			राकेश दत्त मिश्रा सेक्रेटरी, पवनसुत,सर्वांगिण विकास केंद्र चॉदपुर बेला, जी0 पी0 ओ0 पटना बिहार	पटना 8986043046
113	13	9		भरत सिंह, शक्ति सदन, मदन जी का हॉता, आरा भोजपुर ,बिहार	आरा भोजपुर ,बिहार
114	13	3		आचार्य धर्मेंद्र, गौरी शंकर महाविद्यलय ब्रहमपुर भोजपुर बिहार	ब्रहमपुर बक्सर 9973205845
115	13	7		बबलू उपाध्याय , बक्सर होटल,रूम नं0 3 बक्सर, बिहार	
116	14	10		संजय कुमार , पटेल नगर, वार्ड नं0 2 भभुआ कैमूर बिहार	भभुआ कैमूर 9430932335
117	14	3 बजे	भरत सिंह जी	डबलू सिंह,ग्रा0+पो0– चोर वड्डी, जि0 रोहतास , बिहार	
118	15	10 बजे		प्राचार्य श्री आर डी मिश्रा , गॉधी मैमोरियल पब्लिक स्कूल , अकोदी गोला,डिहरी आनसोन,रोहतास बिहार	8986043076
119	15	3 बजे		श्री राजेश कुमार पुत्र रामकेवल, रवानी ग्रा0 गिरचाटी विगहा, पो0 कोइलवा, औरंगाबाद बिहार	औरंगाबाद 9560483819